International Journal of Advanced Educational Research
ISSN: 2455-6157; Impact Factor: RJIF 5.12
www.educationjournal.org
Volume 2; Issue 2; March 2017; Page No. 23-24

प्रेमचंद के उपन्यासों में दलित जीवन

सुमन
शोधार्थी, मोनाड विश्वविद्यालय हापुड़, उत्तर प्रदेश, भारत

प्रस्तावना

प्रेमचंद आधुनिक युग के वे पहले महत्त्वपूर्ण लेखक हैं जिन्होंने दलित समस्या पर सर्वाधिक गहराई से विचार किया है। प्रेमचंद के समकालीन अन्य रचनाकारों ने भी जैसे राहुल सांकृत्यायन और सूर्यकांत त्रिपाठी निराला ने दलित जीवन की भयावह त्रासदी को स्वर दिया है, लेकिन जो सबसे सषक्त स्वर प्रेमचंद ने दिया वैसा किसी ने भी नहीं दिया। उन्होंने आधुनिक भारतीय समाज में जाति व्यवस्था के कारण अछूत माने गए दलित समाज के त्रासद अनुभवों को अपने रचना कर्म का विषय बनाया है।

'दलित' शब्द का नाम सुनते ही एक ऐसे वर्ग का चेहरा हमारे मन में उभरता है जो सदियों से शोशित है और अत्याचार का शिकार होने के लिए विवश किया जाता रहा है। दलित कोई विशेष जाति नहीं और न ही प्राचीन काल से समाज में इनका कोई विशेष उल्लेख मिलता है। प्रारम्भ में वैदिक काल में जब वर्ण–व्यवस्था का आरम्भ हुआ तब समाज में चार वर्णों –ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र की व्यवस्था की गई इस व्यवस्था के अनुसार ब्राह्मण उच्च माने जाते थे जिनका कार्य अध्ययन–अध्यापन करना। क्षत्रियों का कार्य राज्य की रक्षा करना तथा तीसरे स्थान पर वैष्य आते थे इनका कार्य उत्पादन करना और व्यापार करना था। चौथे और अंतिम स्थान पर षूद्र आते थे जिनका कार्य तीनों वर्णों की सेवा करना था। ''यहाँ चार वर्णों की उत्पत्ति एक विराट पुरुश के विभिन्न अंगों से बताई गई है उसके अनुसार उनके मुख भाग से ब्राह्मण, भुजाओं से क्षत्रिय, उदर भाग से वैष्य तथा पैरो से शूद्र उत्पन्न हुए।'' [1] उस समय षूद्रों की स्थिति दयनीय नहीं थी। परन्तु उत्तर वैदिक काल से वर्ण व्यवस्था कठोर हो गई। जिसके कारण अब वर्ण का आधार कर्म न होकर जन्म हो गया और शूद्रों की स्थिति बद से बदतर होती चली गई। यह जो समाज का षूद्र और अस्पृश्य वर्ग था, जो प्रारम्भ में ही निम्न कार्य के योग्य समझे गए, जो सदा उपेक्षित और शोशित रहा, वास्तव में इसी वर्ग को आधुनिक युग में दलित नाम दिया गया। दलित अर्थात शोशित और दमित।

इस प्रकार जाति के आधार पर पेशों का बटवारा तथा उत्पादन के साधानों पर अधिकार या उससे वंचित किया जाना यह सब जाति व्यवस्था द्वारा निर्मित होता था। इन सबके पीछे धर्म का सहारा लिया गया था। हिन्दू धर्मशास्त्र के अनुसार व्यवहार करने पर शूद्र अगले जन्म में उच्चजाति में जन्म ले सकता है। यह उसके पिछले जन्म में किए गए बुरे कर्मों का ही फल है कि इस जन्म में वह शूद्र के रूप में जन्म लेता है। इसलिए पूर्वजन्म के फलस्वरूप अब शूद्र को इस जन्म में तीनों उच्च वर्णों की सेवा करना और बदले में उत्पीड़न, शोशण, अभाव, अपमान और तिरस्कार झेलना पड़े तो इसे वह अपना भाग्य समझे। अतः धर्म ग्रन्थों का हवाला देकर हिन्दू धर्म ने न केवल जाति का निर्माण किया बल्कि इन्सानों को उच्च और निम्न श्रेणियों में विभाजित करके प्राकृतिक संसाधनों पर उनके अधिकारों को भी निश्चित कर दिया।

प्रेमचंद दलित जीवन को हिन्दी साहित्य के केन्द्र में लाने वाले पहले लेखक थे। उनकी कथायें और विचार साहित्य हिन्दी क्षेत्र के दलित जीवन की त्रासदी का प्रमाणिक आंकलन हैं। प्रेमचंद इस समाज से बहुत आहत थे वे सोचते थे यह कैसा समाज है जो मनुष्य को उसके गुणों–अवगुणों से नहीं, बल्कि उसकी जाति से देखता है। उन्होंने अपने लेख 'हमारा कर्त्तव्य' (26 दिसम्बर 1932) में स्पश्ट लिखा है, ''हमारा कर्त्तव्य तभी पूरा होगा जब हम देश के वर्तमान अछूतपन को जड़मूल से नष्ट कर देंगे। इसी लेख में आगे लिखते हैं 'क्या कोई भी वर्णाश्रम अपने ह्रदय पर हाथ रखकर कह सकता है कि वास्तव में यह छुआछूत उन्हें धर्म की दृश्टि से उचित प्रतीत होता है ? नहीं कोई भी यह नहीं कह सकता।'' [2]

प्रेमचंद ने अपने साहित्य में दलितों को विषेश स्थान दिया। प्रेमचंद के उपन्यासों गोदान, कर्मभूमि और रंगभूमि में विस्तार से दलितों के जीवन और उनके संघर्शों की चर्चा है इसके अतिरिक्त प्रेमाश्रम और कायाकल्प में भी दलितों का संक्षिप्त विवरण है। ''कर्मभूमि' में दलितों से सम्बन्धित समस्या मंदिर प्रवेश की है। षहर के ठाकुरद्वारे में कथा हो रही है। जिसे सुनने बड़ी संख्या में लोग आए हुए थे। सहसा मंदिर के कर्मचारी ब्रह्मचारी जी को पता चलता है कि कथा सुनने भंगी चमार भी आये हुए हैं। इस पर वह उन सभी को गालियाँ देने लगते हैं। एक बूढ़े ने हाथ जोड़कर कहा, हम तो यहाँ दरवज्जे पर बैठे थे, सेठ जी, जहाँ जूते रखे हैं। हम क्या ऐसे नादान हैं कि आप लोगों के बीच जाकर बैठ जाते।

ब्रह्मचारी ने उसे एक जूता जमाते हुए कहा तू यहाँ आया क्यों ? प्रसाद है, चरणामृत है, गंगाजल है। सब मिट्टी हुआ कि नहीं ? अब जाड़े–पाले में लोगों को नहाना पड़ेगा कि नहीं। चला है वहाँ से बड़ा भगत की पूंछ बनकर।

लाला समरकांत ने बिगड़कर पूछा, और भी पहले कभी आया था कि आज ही आया है ?

मिठुआ बोला, रोज़ आते हैं महाराज, यहीं दरवज्जे पर बैठकर भगवान की कथा सुनते हैं।

ब्रह्मचारी जी ने माथा पीट लिया। ये दुष्ट रोज़ यहाँ आते थे। रोज़ सबको छूते थे। इनका छुआ हुआ प्रसाद लोग रोज़ खाते थे। इससे बढ़कर अनर्थ क्या हो सकता है ? धर्मात्माओं के क्रोध का परावार न रहा। कई आदमी जूते लेकर उन गरीबों पर पिल पड़े। भगवान के मंदिर में भगवान के भक्तों के हाथों भगवान के भक्तों पर पादुका प्रहार होने लगा।'' [3]

इस घटना के माध्यम से प्रेमचंद ने एक ओर दलितों के मंदिर प्रवेश निशेध जैसी गम्भीर समस्या की ओर ध्यान आकृश्ट कराया है तो वहीं दूसरी ओर डॉ. शान्तिकुमार के माध्यम से दलितों में विद्रोह की चेतना उत्पन्न होती है और अन्त में संघर्श के बाद दलितों को मंदिर में प्रवेश भी मिल जाता है।

दलित की समस्याओं से सम्बन्धित प्रेमचंद का दूसरा प्रमुख उपन्यास गोदान है। गोदान उपन्यास भी दलित चेतना की कथा है। मातादीन और सिलिया की कथा में प्रेमचंद सीधे–सीधे वर्ण व्यवस्था के दो ध्रुवों– ब्राह्मण और चमार को आमने–सामने रखते हैं। मातादीन का सिलिया चमारिन से अवैध प्रेम सम्बन्ध है। सारा गांव इस बात को जानता है लेकिन तब भी किसी को कुछ कहने

का साहस नहीं होता क्योंकि मातादीन रोज़ स्नान–पूजा करता है। धर्म के इस बाह्याडम्बर पर व्यंग्य करते हुए प्रेमचंद लिखते हैं –''हमारा धर्म है हमारा भोजन। भोजन पवित्र रहे फिर हमारे धर्म पर कोई आंच नहीं आ सकती। रोटियाँ ढाल बनकर अधर्म से हमारी रक्षा करती हैं।'' [4]

मातादीन का धर्म छूत विचार पर ही टिका हुआ है। इसलिए चमारों द्वारा मातादीन के मुख में जबरदस्ती हड्डी डाल दिये जाने पर मातादीन स्वयं ही धर्मच्युत हो जाता है उसे पुनः ब्राह्मण बनने के लिए प्रायष्चित करना पड़ता है। प्रेमचंद ने इस घटना क्रम में एक दलित स्त्री के षोशण, उसकी मनः स्थिति और षोशक का काइंयापन बड़े ही सहज ढंग से प्रस्तुत किया है। ये बड़ी जाति के लोग एक दलित स्त्री का किस प्रकार षोशण करते हैं। दलित स्त्री की इज्जत इनकी नजर में कुछ नहीं थी। गोदान के इस प्रसंग से प्रेमचंद ने दलितों के षोशण और दलितों का विद्रोह दोनों दिखाया है।

प्रेमचंद के उपन्यास 'कायाकल्प' में दलित का उल्लेख मिलता है। इसमें एक स्थान पर चमारों से बेगार में घास कटाई जा रही है और उन्हें भोजन भी नहीं दिया जा रहा है। यहाँ ये चमार अपने षोशण के विरूद्ध विद्रोह करते हैं। एक चमार युवक चिल्लाता है, ''हम आठ दिनों से खाली पेट घास काट रहे हैं, तो एक दिन भूखे रहने से घोड़े नहीं दौड़ सकते। क्या हम घोड़ों से भी गए बीते हैं। जब उसे हंटरो से मारा जाता है तो बूढ़ा चौधरी पूछता है, उन्हें काम करने के लिए बुलाया गया है या जान से मार डालने के लिए। वह चेतावनी देता है कि एक जमाना था जब हम आपके लात–घूंसे बर्दास्त करते थे पर आज के बाद ऐसा नहीं होगा।'' [5]

प्रेमचंद का दलितों से सम्बन्धित एक और महत्त्वपूर्ण उपन्यास है 'रंगभूमि'। जिसमें भारतीय जातिप्रथा की सबसे घृणित परम्परा अस्पृष्यता (छुआछूत) के कारण तिरस्कार, अभाव, अपमान और मानवीय अधिकारों से वंचित जीवन जी रहे अछूतों की सामाजिक और आर्थिक स्थिति को अभिव्यक्त किया है। रंगभूमि का मुख्य पात्र सूरदास अंधा चमार है। सूरदास भीख मांगकर अपना जीवन यापन करता है। यद्यपि उसके पास दस बीघा जमीन है। लेकिन जमीन पर गांव के मवेषी घास चरते हैं। सूरदास की यही जमीन उपन्यास के केन्द्र में है। जॉनसेवक नामक व्यापारी इस जमीन को लेकर सिगरेट का कारखाना लगाना चाहता है। सूरदास इसका विरोध करता है और मरते दम तक इसके लिए लड़ता है। 'रंगभूमि' में सूरदास पर जो विपत्ति आती है वह इसलिए आती है क्योंकि उसके पास जमीन है। सूरदास से भूमि लेने की जबर्दस्ती इसलिए की जाती है कि एक गरीब अंधे चमार से सस्ती जमीन और कौन दे सकता है।

'रंगभूमि' में दलितों के संबंध में काफी कम चर्चा होने के बावजूद रंगभूमि को दलित साहित्य में एक उच्च स्थान प्राप्त है। प्रेमचंद ने एक चमार को परोपकारी, समाजसेवी, निःस्वार्थी दिखाया है। सूरदास के चरित्र का सबसे बड़ा गुण उसका अन्याय न सहना दिखाया है जो एक दलित चरित्र के साथ पहली बार हुआ है। 'रंगभूमि' दलित चेतना से संबंधित उपन्यास; सूरदास के अन्याय विरूद्ध संघर्श और उसको जनता द्वारा प्राप्त समर्थन के कारण बन जाता है। जब सूरदास अपनी जमीन के लिए लड़ता है तो पूरा षहर उसका साथ देता है।

इस प्रकार हम देखते हैं प्रेमचंद ने सूरदास के रूप में दलित गांधी का चित्रण किया है। अपने सम्पूर्ण साहित्य के हजारों चरित्रों में प्रेमचंद ने गांधी के गुण एक चमार में दिखाए हैं। वे दलितों को एक उच्च स्थान पर देखना चाहते थे। मि. क्लार्क जिनकी गोली से सूरदास की मृत्यु होती है, उसने भी सूरदास के विशय में कहा, ''हमें भय ऐसे ही मनुश्यों से है जो जनता के हृदय में षासन करते हैं। यह राज्य करने का प्रायष्चित है कि इस देश में हम ऐसे आदमियों का वध करते हैं जिन्हें इंग्लैंड में देवतुल्य समझते हैं।'' [6]

इसी प्रकार 'प्रेमाश्रम' में मनोहर के माध्यम से प्रेमचंद नई पीढ़ी से ऐसी आषा रखते थे कि वे जातिगत भेदभाव और छूत–अछूत की कुप्रथा को न माने और सभी जातियों से समान व्यवहार रखे। इसका एक उदाहरण दर्षनीय है –''मनोहर के खेत में जो मजदूर काम करता था वह चमार जाति का था वह मनोहर और बलराज के साथ ही बैठकर भोजन करता था। एक दिन मनोहर ने देखा कि उसे दूध मिला है जबकि रंगी चमार को नहीं। इस पर वह काफी नाराज़ होता है और कहता है कि उसे दूध मिलना चाहिए क्योंकि रंगी हमसे कहीं ज्यादा काम करता है। मनोहर रंगी को भाई की तरह मानता है।'' [7]

अतः प्रेमचंद मानव–मानव के बीच समानता के पक्षधर हैं, और विषिश्ट जातियों के जन्मजात विषेशाधिकारों का निषेध करते हैं। मनुश्य का स्थान अच्छे गुण और कर्मों के आधार पर निश्चित होना चाहिए न कि जन्म के आधार पर। लेकिन हिन्दू धर्म के जिस तर्क के कारण जातियों का विभाजन, विभिन्न जातियों के बीच रोटी–बेटी के व्यवहार का निशेध किया गया, और अछूतों के मानवाधिकारों को छीनकर उनका शोषण किया उच्च कही गई जातियों को न केवल विषेशाधिकार दिए बल्कि उसकी सुरक्षा के लिए कानून बनाकर उन्हें कड़ाई से लागू भी किया जाता रहा है। जाति व्यवस्था के तहत जन्मना जाति तय होने से व्यक्ति का न केवल सामाजिक दर्जा बल्कि व्यक्ति की आर्थिक स्थिति भी तय हो जाती है।

इस प्रकार प्रेमचंद के साहित्य में हर प्रकार के दलित नजर आते हैं। दलितों के प्रति दृष्टि और राय तथा इस वर्ग की स्थिति सुधारने के उपाय भी सुझाते हुए साहित्य में इनका सर्वत्र वर्णन किया।

संदर्भ

1. प्राचीन भारत का इतिहास – के.सी. श्रीवास्तव, पृ.53.
2. दलित साहित्य की अवधारणा और प्रेमचंद – पृ.114.
3. कर्मभूमि – प्रेमचंद, पृ.153,154, साहित्यगार प्रकाषन, जयपुर, संस्करण – 1988.
4. गोदान – प्रेमचंद, पृ.200, प्रकाषन संस्थान – नई दिल्ली, संस्करण – 2014.
5. कायाकल्प – प्रेमचंद, पृ.93,94, प्रकाषन संस्थान – नई दिल्ली, संस्करण – 2012.
6. रंगभूमि – प्रेमचंद, पृ.276, डायमण्ड पॉकेट बुक्स – नई दिल्ली, संस्करण – 2000.
7. प्रेमचंद साहित्य में हाशिए का समाज – शुभ्रा सिंह, पृ.101, अनामिका पब्लिसर एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स प्रा.लि. नई दिल्ली, संस्करण – 2014.